शोध मंथन Vol. XIV No.I Jan.-Mar.2023 ISSN: (P) 0976-5255 (e) 2454-339X
Available at: *http:/shodhmanthan.anubooks.com*

आधुनिक परिप्रेक्ष्य में वेदान्तदर्शन की उपादेयता

प्राप्तिः 11.03.2023
स्वीकृतः 16.03.2023

संगीता राठौर
शोधार्थी, संस्कृत विभाग
बरेली कालेज, बरेली
एम०जे०पी०रू० विश्वविद्यालय, बरेली
ईमेलः *sangjirathor@gmail.com*

17

सारांश

वेदान्तदर्शन सार्वभौमिक एवं सार्वकालिक रत्नस्वरूप शिक्षाओं से परिपूर्ण एक ऐसा मानसरोवर है जिसमें गोता लगाने से किसी न किसी रत्न की प्राप्ति हो ही जाती है। जिसे धारण कर मानव मन में उपजती उद्विग्निताओं से निवृत्त होकर इहलौकिक तथा पारलौकिक जीवन को आनन्दमय बनाने में सफल हो सकता है। वेदान्तदर्शन मानव जीवन को सत्मार्ग का प्रेरक व जीवन की सफलता का आधार है क्योंकि सफलता के कारक परा विद्या (ज्ञान) सत्य, तप और ब्रह्मचर्यादि धर्म की प्राप्ति वेदान्त मार्ग के द्वारा ही होती है–

एवंरुपा परा विद्या सत्येन तपसापि च।
ब्रह्मचर्यादिभिधर्मैलभ्य वेदान्तवर्त्मना।। (1)

मुख्य बिन्दु

ब्रह्मतत्व, आत्मज्ञान, व्यवहारिकता, आध्यात्मिकता, मानवजीवन, आत्मसात्, सत्वगुण, सामंजस्य।

वेदान्तदर्शन मानव–जीवन में उस दर्पण के समान है जो मनुष्य को उसकी वास्तविक छवि का दर्शन कराता है। वेदान्त दर्शन सभी दर्शनों में प्रधान दर्शन है। इसका मूल स्रोत वेद का अन्तिम भाग उपनिषद् है इसलिये कहा गया है– वह शास्त्र जिसके लिये उपनिषद् ही प्रमाण है। वेदान्तदर्शन का चिन्तन विषय उपनिषद, गीता और ब्रह्मसूत्र, ये प्रस्थानत्रयी हैं। वेदान्तदर्शन दर्शनाकाश में उस देदीप्यमान सूर्य की भाँति है जो अपने ज्ञान रुपी प्रकाश से समस्त संसार को आलोकित करता है। यह व्यवहारिकता और आध्यात्मिकता का ऐसा प्रगाढ़ सामंजस्य है, जिसे आत्मसात् कर मानव विकारों व त्रिविध दुःखों से निवृत्त होने के साथ ही मनुष्य सांसारिक भोग विलासों में लिप्त न होकर अनासक्त भाव से भोगों का भोग करते हुये आत्मज्ञान प्राप्त कर इस सांसारिक जीवन से मुक्त होकर ब्रह्मतत्व में लीन हो जाता है–

वेदान्त विज्ञान सुनिश्चितार्थाः सन्यासयोगाद् यतयः शुद्धसत्वाः।
ते ब्रह्मलोकेशु परान्तकाले परामृताः परिमुच्यन्ति सर्वे।। (2)

आधुनिक युग शनैः शनैः यन्त्रीकरण व कृत्रिम हो रहा है। अन्तर्जाल (इन्टरनेट) एक ऐसा कृत्रिम मायाजाल है। जिसने मनुष्य का वशीकरण कर लिया है। इसके बिना मनुष्य पंगु बन गया है।

इसका सदुपयोग की अपेक्षा दुरुपयोग अधिक हो रहा है, जिसके कारण अश्लील वीडियो, अतरंग चलचित्र देखकर युवा ही नहीं हर उम्र के व्यक्तियों में खासकर छोटी उम्र के बालकों के मन में कुविचार पनप रहे हैं, जिसके परिणामस्वरूप विश्वभर में अशान्ति, हत्या, हिंसा, आतंकवाद, बलात्कार जैसे जघन्य अपराध बढ़ रहे हैं। साइबर क्राइम आज सबसे बड़ी समस्या बनकर खड़ी हो गई है। विकास मानवहितार्थ होता है, अहित हेतु नहीं।

आज हम विकास के जिस मार्ग पर चल रहे हैं वह भौतिक सुख–संसाधनों से सम्बन्धित है। आत्मिक विकास से नहीं। वैश्विक स्तर पर निरन्तर बढ़ रहे दुर्व्यवहार व आत्महीनता को देखते हुये वेदान्त दर्शन की व्यावहारिकता व आध्यात्मिकता को आत्मसात् कर मानव के स्वभाव को परिवर्तित किया जा सकता है। इसलिये मानव व्यवहार की पृष्ठभूमि तैयार करने के लिये जिसमें सद्भावना, सत् विचार, मधुरभाषी, परोपकार, दया, त्याग, सत्य, अहिंसा आदि सत्वगुण रुपी बीज चित्त रुपी भूमि में बोये और ज्ञान रुपी जल से सिंचित किया जाना चाहिये लेकिन ये बीज तब तक अंकुरित नहीं हो सकते जब तक कीट रुपी विकारों का विनाश नहीं हो जाता। आज गृहस्थ जीवन से लेकर अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर इन सत्वगुणों की आवश्यकता आन पड़ी है, क्योंकि मानव मन में काम, क्रोध, लोभ आदि विकारों ने महान दैत्य–असुरों का रुप धारण कर लिया है– **लोभ क्रोधादयो दैत्याः।**[3] मनुष्य स्वार्थी और महत्वाकांक्षी बनता जा रहा है, महत्वाकांक्षा ही मनुष्य को भोग साधनों का अतिसंग्रह करने के लिये बाध्य करती है जो एक महारोग और समस्त वैभव परम आपत्तियों का रूप धारण कर लेती है– **भोगा भोगा महारोगाः संपदः परमापदः।**[4] यह महत्वकांक्षा ही मनुष्यों व देशों में परस्पर गृह कलह व युद्ध का कारण बन जाती है। अतः मानव व्यवहार में हो रहे परिवर्तन की भयावह स्थिति को देखते हुये वेदान्त के विचारों को समाज में प्रवाहित करना और मानव द्वारा विचारों को आत्मसात् करना अत्यन्त आवश्यक है। क्योंकि वेदान्त वस्तुतः जीवन का ही विज्ञान है, लेकिन आधुनिक समाज का प्रत्येक प्राणी वेदान्त के सिद्धान्तों से अनभिज्ञ व अज्ञानतावश लक्ष्यहीन होकर इस नश्वर संसार में भटक रहा है।

वेदान्तानुशीलन मानव के समक्ष जीवन एवं जगत के मूल स्वरूप को प्रकट कर देता है। जिसके कारण वह मिथ्या मोह एवं आसक्ति से विमुक्त हो जाता है। वेदान्त का सिद्धान्त है–ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या, जीवों ब्रह्मैव नापरः। अर्थात् 'एकमात्र ब्रह्म ही सत्य है, जीव पृथक नहीं, ब्रह्म ही है, यही अद्वैत सिद्धान्त है। इस ब्रह्म को ही सत्य ज्ञान और अनन्त कहा गया है– **सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म।**[5] जो इस सत्य को जान लेता है वास्तव में वही परमानन्द प्राप्त कर सकता है क्योंकि परमात्मा ही सत्–चित्–आनन्द स्वरूप है। इसकी अनुभूति ही वास्तविक सुख है।

मनुष्य कर्म और ज्ञान का समन्वय है इसीलिये वेदान्त में कर्म और ज्ञान का जैसा सामंजस्य प्राप्त होता है वह किसी अन्य ग्रन्थों में नहीं। अपनी विलक्षणताओं के कारण ही वेदान्त दर्शन दर्शन जगत में सिर मौर कहा जाता है। मानव जीवन कर्मशील होता है मनुष्य बिना कर्म किये नहीं रह सकता। कर्म के द्वारा ही प्राणी का अस्तित्व कहा गया है– **कर्मणा वर्तते कर्मी।**[6] गीता में भी कहा है कि कर्म न करने की अपेक्षा कर्म करना श्रेष्ठ है क्योंकि कर्म के बिना शरीर का निर्वाह भी नहीं हो सकता है–

नियतं कुरु कर्म त्वं कर्म ज्यायो ह्यकर्मणः।
शरीरयात्रापि च ते न प्रसिद्धयेदकर्मणः।। (7)

वाक्आदि इन्द्रियाँ मनुष्यों के मन को कर्म करने के लिये प्रेरित करती हैं मन समस्त इन्द्रियों के कार्यकलापों का केन्द्र बिन्दु है यदि इन्द्रियों को सत् कर्म न लगाया जाये तो यह विषय वासनाओं में प्रवृत्त हो जाती है इन्द्रियाँ इतनी प्रबल होती हैं कि वह एक विवेकी पुरुषी के मन को भी हर लेती हैं–

इन्द्रियाणि प्रमाथीनि हरन्ति प्रसभं मनः। (8)

ये इन्द्रियाँ ही मन को चंचल बनाती हैं जिससे काम का उद्भव होता है इन्द्रियविषयों का चिन्तन करने से मनुष्य के मन में आसक्ति उत्पन्न होने लगती है इसी से काम, काम से क्रोध, क्रोध से मोह उत्पन्न होता है। मोह से स्मृति शक्ति क्षीण होने लगती है और स्मृति शक्ति क्षीण होने से बुद्धि नष्ट हो जाती है जिससे मनुष्य इस सांसारिक भव कूप में गिर जाता है।(9) इन्द्रियों, मन तथा बुद्धि को काम का निवास स्थान बताया है यह काम ही जीवात्मा के वास्तविक ज्ञान को ढक कर उसे अपने वश में कर लेता है–

इन्द्रियाणि मनो बुद्धिरस्याधिष्ठानमुच्यते।
एतैर्विमोह्यत्येश ज्ञानमावृत्य देहिनम्।। (10)

इसीलिये कृष्ण ने अर्जुन को उपदेश देते हुये कहा है– कि इन्द्रियों को वश में करके इस पाप के महान प्रतीक काम का दमन करो क्योंकि यह ज्ञान का विनाश करने वाला है–

तस्यात्वमिन्द्रियाण्यादौ नियम्य भरतर्षभ।
पाप्मानं प्रजहि ह्येन ज्ञानविज्ञाननाशनम्।। (11)

कामनायें ही अनर्थों की जड़ है, इसीलिये वेदान्त में कामनाओं एवं फलप्राप्ति के संकल्प को त्यागने की शिक्षा दी गई है– **काम संकल्पवर्जितः।**(12) गीता में श्री कृष्ण ने अर्जुन को निष्काम भाव से कर्म करने का उपदेश दिया है–

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेशु कदाचन। (13)

मनुष्य को यज्ञ, दान और तप कर्म निष्काम भाव से करना चाहिये क्योंकि ये तीनों मनुष्यों को पवित्र करने वाले हैं। ये कर्म आसक्ति को त्याग कर करना चाहिए–

यज्ञो दानं तपष्चैव पावनानि मनीषिणाम्।
एतान्यपि तु कर्माणि संग व्यक्त्वा फलानि च।। (14)

ईशावस्योपनिषद में भी मनुष्य को त्यागपूर्ण भोग करने की शिक्षा दी है क्योंकि ये धन और भोग्य पदार्थ क्षणिक मात्र है– **तेन त्यक्तेन भुंजीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्।।**(15) ईश्वर द्वारा प्रदत्त व सत् कर्मों द्वारा कमाया हुआ धन का भोग करना चाहिये। किसी अन्य के धन का लालच नहीं करना चाहिये लेकिन धन एक ऐसी मोघत्मिका शक्ति है मनुष्य को अपनी ओर आकर्शित करती है अविवेकी तथा अज्ञानी मनुष्य इससे मोहित होकर एक दूसरे से छीनने में लग जाते हैं क्योंकि मनुष्य में धन की तृष्णा कभी समाप्त नहीं होती अपितु बढ़ती ही जाती है जैसा कि कठोपनिषद् में कहा है– **न वित्तेन तर्पणीयो मनुष्यो।**(16)

धन के मोह से जकड़े हुये विवेकहीन, अज्ञानी, प्रमादी मनुष्य के चित्त में कभी भी पारलौकिक विचारधारा का अभ्युदय नहीं होता है। भौतिक संसार में रहते हुये मनुष्य के समक्ष दो मार्ग उपस्थित होते हैं– श्रेय और प्रेय मार्ग–

श्रेयश्च प्रेयश्च मनुष्यमेतस्तौ संपरीव्य विविनक्ति धीरः।
श्रेयो हि धीरोऽभि प्रेयसो वृणीते प्रेयो मन्दो योगक्षेमाद्वृणीते।। (17)

ये दोनों मार्ग मनुष्य को अपनी ओर आने के लिये प्रेरित करते हैं। श्रेयमार्ग कल्याणकारी मार्ग है, जो मनुष्य की आध्यात्मिक उन्नति के साथ–साथ सत्कर्म व अपने धर्म का निर्वाह करने की शिक्षा देते हुये मोक्ष का मार्ग प्रशस्त करता है। विवेकी व धीर मनुष्य ही इस मार्ग को अपनाता है, और जो मनुष्य स्वार्थी व अज्ञानी होता है वह मायात्मिक शक्ति से वशीभूत होकर सांसारिक भोगों का भोग हेतु प्रेयमार्ग को अपनाता है। प्रेयमार्ग मनुष्य को जन्म–मरण के बन्धन में डालता है। श्रेयमार्ग सभी बन्धनों से मुक्त करता है अतः श्रेयमार्ग ही मनुष्य के लिये श्रेष्ठ मार्ग है। इन्हीं दोनों मार्गों को विद्या और अविद्या के नाम से जाना जाता है। अविद्या द्वारा मनुष्य सांसारिक सुख–साधनों का उपभोग करता हुआ मृत्यु को प्राप्त करता है और अन्त में विद्या (ज्ञान) द्वारा उस आत्मतत्व अर्थात् अमृत को प्राप्त करता है।

विद्यां चाविद्या च यस्तद्वेदोभ्य सह।
अविद्या मृत्यु तीर्त्वा विद्यायामृतमश्नुते।। (18)

वेदान्तानुसार मनुष्य के जीवन का लक्ष्य इस आत्मज्ञान को प्राप्त करना है क्योंकि मनुष्य का मूल स्वरूप ही आध्यात्मिक है। यह दो तत्वों से मिलकर बना है और शरीर और आत्मा। आत्मतत्व के बिना यह शरीर शव के समान है आत्मतत्व ही शरीर को चेतना प्रदान करता है जिससे शरीर कर्म करता है। आत्मतत्व मानव शरीर में रहकर अनेक कर्म व भोगों का भोग कर भी मुक्त रहता है। यह शरीर नाशवान है। एकमात्र आत्मतत्व ही अजर, अमर है शाश्वत् है। यह न किसी से उत्पन्न होता है, न ही यह मरता है और न ही किसी के द्वारा मारा जाता है जैसा कि कठोपनिषद में कहा गया है–

न जायते म्रियते वा विपश्चिन्नायं कुतश्चिन्नवभूव कश्चित्।
अजो नित्य शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे।। (19)

यह आत्मा ही ब्रह्म है– अयमात्मा ब्रह्म।(20) तिलों में तैल और पुष्पों में गंध की भाँति ही यह ब्रह्म समस्त प्राणियों में विद्यमान रहता है–

तिलेषु च यथा तैलं पुष्पे गन्ध इवाश्रितः।
पुरुषास्य शरीरेऽस्मिन्स बाह्याभ्यान्तरे तथा।। (21)

छान्दोग्योपनिषद् में भी कहा है कि यह सम्पूर्ण जगत निश्चय ही ब्रह्मस्वरूप है यह उसी से उत्पन्न होता है, उसी में लय होता है, उसी से यह जगत संचालित होता है, राग–द्वेश से दूर शान्त भाव से ब्रह्म की ही उपासना करनी चाहिये– **सर्वं खल्विदं ब्रह्म तज्जलानिति शान्त उपासीत्।** (22) वेदान्त में भी **'अथातो ब्रह्म जिज्ञासा'** (23) का उद्घोष किया गया है क्योंकि इस ब्रह्मतत्व को जान लेने पर समस्त बन्धनों से मुक्ति तथा समस्त क्लेष क्षीण होकर इस संसार में जन्म–मृत्यु के बन्धन से मुक्ति मिल जाती है–

ज्ञात्वा देवं सर्वपाशपहानिः क्षीणैः क्लैशैर्जन्ममृत्युप्रहाणिः। [24]

इस आत्मतत्व (ब्रह्म) की अनुभूति ज्ञान से ही संभव है, और ज्ञान प्राप्ति वेदान्त से ही संभव है वेदान्त में ज्ञान को इस प्रकार परिभाषित किया गया है– **अभेद दर्शनं ज्ञानं।**[25] अर्थात् सभी प्राणियों में ब्रह्म का अभेद रुप से दर्शन करना यथार्थ ज्ञान है। ज्ञान ही सबसे पवित्र तत्व है–

न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते।[26]

मानव अज्ञानता के कारण ही सांसारिक विषय भोगों में लिप्त होकर नाना प्रकार के बन्धनों में बंध जाता है इस अज्ञान व बन्धनों से छुटकारा पाना ज्ञान से ही संभव है, इसीलिये कहा गया है कि ज्ञान ही अज्ञान के नाश के लिये समर्थ है कर्म नहीं– **विद्यैवाज्ञानहानाय न कर्म।**[27]

वेदान्त का लक्ष्य ही अज्ञान की निवृत्ति करना है क्योंकि अज्ञान की निवृत्ति ही मोक्ष है अज्ञान के निमित्त ही मनुष्य भौतिक विषयों में प्रवृत्त होता है अज्ञान से ही काम, क्रोध, लोभ, मोह अहंकार आदि तामसिक प्रवृत्तियों का उद्भव होता है ज्ञान द्वारा अज्ञान का नाश ही वास्तविक मुक्ति है। ज्ञान प्रकाश है अज्ञान अंधकार है इसीलिये बृहदराण्यकोपनिषद् में समस्त प्राणियों के कल्याण की कामना करते हुये कहा है– **असतो मा सद्गमय तमसो मा ज्योतिर्गमय मृत्योमाऽमृतं गमय।**[28] ज्ञान वस्तुओं के आभास में व्याप्त सत्यस्वरूप का निरुपण करने का प्रयास करता है। जो ज्ञान चाहता है उसे शरीर मन और इन्द्रियों को पवित्र करना चाहिये। मन और इन्द्रियों को उनके विषय–वासनाओं से हटाकर ब्रह्मतत्व पर केन्द्रित करना आवश्यक है तभी मन की चंचलता नष्ट हो सकती है। ऐसा न करने पर मनुष्य परमतत्व को नहीं समझ सकता। कठोपनिषद में यमराज नचिकेता को आत्मतत्व की शिक्षा देते हुये कहते हैं–

नाविरतो दुष्चरितान्नाशान्तो नासमाहितः।
नाशान्तमानसो वापि प्रज्ञानेनैनमाप्नुयात्।।[29]

अर्थात् जो व्यक्ति दुष्कर्मों के पाप से निवृत्त नहीं है, जिसकी इन्द्रियाँ भी स्वयं के नियन्त्रण में नहीं है तथा जिसका मन पूर्ण रूप से सांसारिकता से छूटा नहीं है ऐसा व्यक्ति प्रकृष्ट ज्ञानी होने पर भी सुसंस्कारित जीवन के अभाव में इस आत्मतत्व को जानने में समर्थ नहीं हो सकता। प्रश्नोपनिषद में भी गुरु शिष्यों को ब्रह्म ज्ञान प्राप्ति की शिक्षा देते हुये कहते हैं कि जिन व्यक्तियों में झूठ, कुटिलता, छल–कपट नहीं है वे विशुद्ध ब्रह्म लोक प्राप्त करते हैं– **तेशामसौ विरजो ब्रह्मलोको न येशु जिह्यमनृतं न माया चेति।**[30] मुण्डकोपनिषद में भी कहा है कि उस ब्रह्मतत्व की प्राप्ति, सत्यभाषण, तपश्चर्या, सम्यज्ञान् ब्रह्मचर्य आदि नित्यवृतों से होती है– **सत्येन लभ्यस्तपसा ह्येष आत्मा सम्यग्ज्ञानेन ब्रह्मचर्येण नित्यम्।**[31] वेदान्त में कहा है कि जो मनुश्य असत्य बोलता है वह समूल सूख जाता है– **समूलो वा एश परिशुष्यतिमोऽनष्तमभिवदति।**[32] असत्य बोलने वाला मनुष्य कभी भी समाज में सम्मान का अधिकारी नहीं बन पाता है अतः वह परमानन्द प्राप्ति का भी अधिकारी नहीं बन सकता। क्योंकि सर्वथा सत्य की ही विजय होती है असत्य की नहीं और देवयान् अर्थात् आत्मज्ञान का मार्ग भी सत्य से परिपूर्ण होता है– **सत्यमेव जयते नानृतं सत्येन पन्था विततो देवयानः।**[33]

आधुनिक युग प्रतिस्पर्धाओं का युग है यहाँ हर कोई स्वयं को शीर्ष स्थान पर देखना चाहता

है आगे निकलने की महत्वाकांक्षा मनुष्य को अनैतिक कार्य करने के लिये बाध्य करती है जिससे न केवल मनुष्य स्वयं का बल्कि मानव सृष्टि का भी पतन करता है। विश्व बन्धुत्व व आत्मीयजनों के प्रति कैसा व्यवहार करना चाहिये, यह शिक्षा वेदान्त दर्शन से ही मिलती है– **मातृ देवो भव, पितृ देवो भव, आचार्य देवो भव, अतिथि देवो भव। वेदान्त दर्शन मानव सृष्टि के रक्षार्थ हेतु, सत्यं वद धर्म चर की शिक्षा देता है। मनुष्य की उन्नति हेतु स्वाध्यान्या प्रमदः। कुशलान्न प्रमदितत्यम।** [34] की भी शिक्षा देता है इस प्रकार वेदान्त व्यक्ति के समग्र विकास में सहायक सिद्ध होता है। मानवता के रक्षार्थ हेतु व जीवन की मुक्ति हेतु आचार्य शंकर ने अपने शिश्यों को उपदेश दिया है–

मोक्षस्यकाङ्क्षा यदि वै तवास्ति त्यजाति द्वराद्विषयान् विषं यथा
पीयूषवत्ताष दयाक्षमार्जव प्रशन्तिदान्तीर्भज नित्यमादरात्।। [35]

अर्थात् मुक्ति के इच्छुक व्यक्ति को विषयों को विष के समान त्याग कर, सन्तोष, दया, क्षमा, सरलता, शम और दय आदि तत्वों का अमृत के समान सेवन करना चाहिये।

आधुनिकता के परिवेश में लिप्त मानव को वेदान्त दर्शन के विचारों व शिक्षाओं की अत्यन्त आवश्यकता है, जिससे जीव पारमार्थिक सत्ता का ज्ञान प्राप्त कर इस संसार में मैत्रीपूर्वक और सौहार्दपूर्ण व्यवहार करते हुये दिव्य आनन्द प्राप्त कर सकता है यही वेदान्त का सार है और यही वेदान्त का ध्येय है क्योंकि वेदान्त कहता है– कि एकमात्र परमात्मा ही पूर्ण है अन्त में इसी में ही सब कुछ समाहित हो जाता है–

ऊँ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णात्पूर्णमुदच्यते।।
ऊँ शान्तिः शान्तिः शान्ति।

सन्दर्भ

1. पाशुपतब्रह्मोपनिषद् मंत्र ।।32।।
2. मुण्डकोपनिषद् मंत्र ।।3/2/6।।
3. कृष्णोपनिषद् ।।9।।
4. अक्ष्युपनिषद् ।।2/23।।
5. तैत्तिरीयोपनिषद् ।।2/2/1।।
6. त्रिशिखिब्रह्मणोपनिषद् ।।15।।
7. श्रीमद्भगवद्गीता ।।3/8।।
8. गीता ।।2/60।।
9. गीता ।।2/62–63।।
10. गीता ।।3/40।।
11. वही ।।3/41।।
12. जाबालदर्शनोपनिषद् ।।2/5।।
13. गीता ।।2/17।।

14. गीता ।।18/5–6।।
15. ईशावस्योपनिषद् ।।1।।
16. कठोपनिषद् ।।1/1/27।।
17. कठोपनिषद् ।।1/2/2।।
18. ईशावस्योपनिषद् ।।11।।
19. कठोपनिषद् ।।1/2/18।।
20. बृहदारण्यकोपनिषद् ।।4/5/5।।
21. ब्रह्मविद्योपनिषद् ।।35।।
22. छान्दोग्योपनिषद् ।।3/14/1।।
23. ब्रह्मसूत्र ।।1/1।।
24. श्वेताश्वरोपनिषद् ।।1/11।।
25. स्कन्दोपनिषद् ।।11।।
26. गीता ।।4/38।।
27. श्री शंकराचार्यविरचित् उपदेशसाहस्त्री ।।1/6।। व्याख्याकार–डॉ० गजानन शास्त्री मुसलगाँवकर. श्री दक्षिणमूर्ति मठ प्रकाशनः वाराणसी।
28. बृहदारण्यकोपनिषद् ।।1/3/28।।
29. कठोपनिषद् ।।1/2/24।।
30. प्रश्नोपनिषद् ।।1/16।।
31. मुण्डकोपनिषद् ।।3/1/5।।
32. प्रश्नोपनिषद् ।।6/1।।
33. मुण्डकोपनिषद् ।।3/1/6।।
34. तैत्तिरोपनिषद् ।।1/12, 1/11।।
35. आद्यशंकराचार्यविरचित् विवेकचूड़ामणि–श्लोक ।।84।।, व्याख्याकार– स्वामी प्रखर प्रज्ञानन्द सरस्वती. चौखम्भा संस्कृत संस्थानः वाराणसी।